गोविभा

गोविज्ञान भारती का
संदेशवाहक मासिक

वर्ष : 12 ● अंक : 07 | सम्पादक : नरेन्द्र दुबे, डॉ. पुष्पेन्द्र दुबे 20 अक्टूबर, 2014

सर्वोदय दिवस

— विनोबा

गांधी जी के निर्वाण के दिन को, उनके स्मृति दिन को मैं 'सर्वोदय दिन' कहना चाहता हूं। क्योंकि आखिर व्यक्ति की अपेक्षा विचार पर दृष्टि स्थिर होना अधिक लाभप्रद है। उनके जन्म-दिवस को लोग 'गांधी जयंती' कहते थे। लेकिन गांधीजी कहते, 'उसे आप चरखा जयंती कहें, उससे एक विचार आपके पास रह जाएगा।' अफ्रीका से लिखे हुए एक पत्र में वे लिखते हैं, 'मेरा नाम मिटेगा तभी मेरा काम आगे बढ़ेगा।' ज्ञानदेव भी कहते हैं, 'मांझे असतेपण लोपो, नामरूप हारपो यानी मेरा नाम-रूप मिट जाए। विचार तो जिंदा रहे, व्यक्ति तो मरने ही वाला है। ऐसा न होकर व्यक्ति का नाम ही जिंदा रहा, तो हम खतरे में पड़ जायेंगे। फिर हम संकुचित पंथ बनायेंगे, समाज के टुकड़े करेंगे।

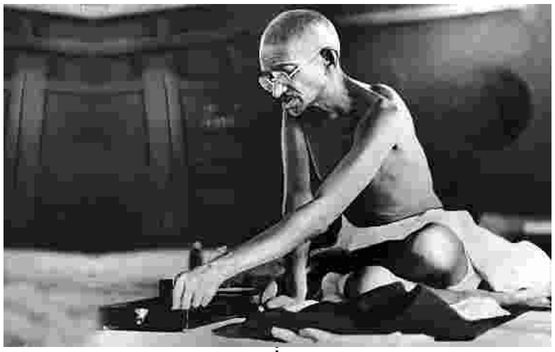

यदि हम सर्वोदय दिन को क्रियाशील चिंतन में व्यतीत करें, तो बहुत बड़ा काम होगा। उस दिन सामुदायिक तौर पर कुछ क्रियात्मक कार्यक्रम होना चाहिए। मैं सुझाऊंगा कि उस दिन सब मिलकर सार्वजनिक सफाई का काम करें। सभी भंगी बनकर सारा देश आईने की तरह चमका दें। वैसे ही इस देश को उत्पादन की बहुत आवश्यकता है। इसलिए सब लोग चरखा अवश्य चलायें और प्रेमसूत्र से सबके हृदय एकसाथ जोड़े जायें। इन दो क्रियात्मक कार्यक्रम के अलावा सामुदायिक प्रार्थना भी होनी चाहिए। उसमें सब जातियों, जमातों के लोग सम्मिलित हों और वहां परमात्मा के नाम से सबके हृदय शुद्ध और एकभावापन्न हों। हो सके तो उस दिन उपवास भी किया जाये, उससे शुद्धि में मदद होगी।

इस कार्यक्रम के साथ सर्वोदय के विचार का चिंतन भी होना चाहिए। वह अनेक प्रकार से हो सकता है। हमें विशिष्टों का नहीं, बल्कि सबका उदय साधना है, यह एक चिंतन हुआ। किसी के भी हित से दूसरे किसी के हित का विरोध नहीं हो सकता, सबके हित अविरोधी होते हैं - यह दूसरा चिंतन है। मैं सबमें हूं और सब मुझमें हैं। इसलिए सबकी सेवा में शून्य हो जाना मेरा कर्तव्य है, यह तीसरा चिंतन है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि यह सब साधने के लिए सत्य का व्रत अनिवार्य है। साथ ही हमारा किसी पर भी आक्रमण नहीं होगा, इसकी चिंता रखनी चाहिए। संयम सीखना चाहिए। इस तरह उस दिन अनेक प्रकारों से सर्वोदय का चिंतन किया जाये।...

सर्वोदय की यह खूबी है कि वह सब विचार-शैलियों के अच्छे अंश को एक करता है। किसी विचार श्रेणी को दूसरी किसी विचार श्रेणी से टकराने नहीं देता। समुद्र सबका स्वागत करता है। चाहे महानदी हो या छोटा नाला हो, उसका स्वीकार समुद्र प्रेम से करता है। किसी नदी या नाले से नहीं डरता। क्योंकि वह जानता है कि जो आएगा उसको वह अपना रूप देगा। यह शक्ति जिस विचार में होती है, वह विचार पराक्रमी होता है। उस पराक्रम का कोई विरोध नहीं करता।...

अपने परिवार के तीन नाम हैं - खादी परिवार, गांधी परिवार, सर्वोदय परिवार।' गांधी परिवार ऋषि का नाम है। सर्वोदय परिवार मंत्र का नाम है और खादी परिवार तंत्र का नाम है। ऋषि होता है तो उसका मंत्र भी होता है और उस मंत्र को अमल में लाने के लिए तंत्र होता है।''

- विनोबा साहित्य
खण्ड 20 शेषामृतम्

सम्पादकीय

राजनीतिमुक्त रचनात्मक कार्यक्रम की दरकार

राजनीति और रचनात्मक कार्य में बहुत बुनियादी अंतर है। यद्यपि दोनों को एक-दूसरे का पूरक समझा जाता है। अधिकांश विद्वानों का विचार है कि राजनीति के माध्यम से जनता के बीच जो कार्य किए जाते हैं, वे रचनात्मक की श्रेणी में आते हैं। यह भी समझा जाता है कि राजनीति के द्वारा संचालित किए जाने वाले रचनात्मक कार्यो से पीड़ित-दु:खी जनता को कुछ राहत मिलती है। जबकि सर्वोदय विचार का मानना है कि रचनात्मक कार्य करने वालों को राजनीति में नहीं पड़ना चाहिए। रचनात्मक कार्य का आरंभ अंतिम पंक्ति में खड़े अंतिम व्यक्ति की भलाई को दृष्टि में रखकर किया जाता है, जबकि राजनीति हमेशा ही अधिकतम लोगों का अधिकतम कल्याण के सिद्धांत पर आधारित होती है। महात्मा गांधी और संत विनोबा दोनों को ही सफाई कार्य सर्वाधिक प्रिय था। विनोबा ने तो सन् 1960 में नगर अभियान के अंतर्गत इन्दौर में एक माह बिताया और पूरे नगर में सफाई अभियान चलाया। वे स्वयं इन्दौर की बदबूदार और भयंकर गंदी गलियों में सफाई करने उतरे और नागरिकों को जागरूक किया। इसके बाद भी आज की तारीख में इन्दौर का नाम सर्वाधिक गंदे शहरों में शामिल है, जबकि साक्षरता के मामले में यह शहर शत-प्रतिशत साक्षर कहलाता है।

इन्दौर में रहकर ही विनोबा ने कस्तूरबाग्राम में सफाई पर व्याख्यान दिए, जिसकी बाद में 'शुचिता से आत्मदर्शन' नाम से पुस्तक प्रकाशित हुई। हाल ही में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने महात्मा गांधी की जयंती से स्वच्छ भारत अभियान प्रारंभ किया है। ऐसा लगा कि पूरा देश एक साथ सड़कों पर उतर कर देश को एकदम साफ-सुथरा कर देगा। लेकिन यह काम इतना आसान है क्या ? महात्मा गांधी ने अंग्रेजों की गुलामी से मुक्ति के लिए एक तरफ तो सत्याग्रह शास्त्र का विकास कर जनता के दिलों से मृत्यु के भय को निकाला तो दूसरी ओर विधायक कार्य के रूप में जनता को अठारह रचनात्मक कार्यक्रम दिए। भारत में अस्पृश्यता महाअभिशाप रही है। इसलिए उन्होंने अस्पृश्यता मिटाने के लिए सफाई को सर्वोपरि माना और जब भी कोई विदेशी मेहमान उनके साबरमती आश्रम में मिलने के लिए आता था तो उसे वे सबसे पहले अपना शौचालय दिखाते थे। देश के आजादी आंदोलन में एक बड़े तबके को साथ में लाने के लिए सफाई एक रचनात्मक कार्य बना, जिसमें हजारों सवर्णों ने भाग लिया। आजादी आंदोलन के दौरान जातियों के बंधन ढीले हुए थे, लेकिन निजी स्वार्थों के चलते वे एक बार फिर मजबूत हो गए हैं। अभी तक अनुभव यही कहता है कि जब भी राजनीति ने रचनात्मक कार्य को अपने हाथ में लिया है, वह अपने लक्ष्य में कभी सफलता हासिल नहीं कर सका है। वह कार्यक्रम चाहे खादी ग्रामोद्योग हो, चाहे नयी तालीम हो, चाहे गोसेवा हो, चाहे सांप्रदायिक सद्भाव हो, भूदान आंदोलन हो, ग्राम स्वराज्य हो, ग्रामदान हो।

स्वच्छ भारत अभियान में देश के नागरिकों को शपथ भी दिलाई गई, जिसमें एक वाक्य है न मैं गंदगी करूंगा, न करने दूंगा। यह महात्मा गांधी के विचारों के बिलकुल विपरीत है। इसमें विनम्रता का भाव तिरोहित हो गया है। पड़ोसियों में साफ-सफाई को लेकर जब-तब झगड़े हो जाया करते हैं। 'न करने दूंगा' का समापन झगड़े में होने का अंदेशा हमेशा बना रहेगा। देश में कार्यरत विभिन्न संगठनों के लाखों स्वयं सेवक यदि देश स्वच्छ भारत का संकल्प लेते, तो आजादी के बाद जिस अस्पृश्यता का दंश हम भोग रहे हैं, वह कब का समाप्त हो चुका होता। अस्पृश्यता के खिलाफ कानून बना देने के बाद भी अत्याचारों में कोई कमी नहीं आई है। राजनीति से सत्ता तो बदली जा सकती है, लेकिन लोकमानस नहीं। लोकमानस बदलने के लिए राजनीतिमुक्त रचनात्मक कार्यक्रम ही चाहिए। शांतिसेना, आचार्यकुल और गोरक्षा सत्याग्रह से इस आकांक्षा की पूर्ति हो सकती है।

— पुष्पेन्द्र दुबे

इस अंक में ...

- आदर्श ग्राम की सर्वोदयी दृष्टि
- यह धर्मांतरण नहीं समाजांतरण है
- जिजिविषेत् शतं समा:

आदर्श ग्राम की सर्वोदयी दृष्टि [1]

आजादी के 68 साल बाद एक बार फिर भारत सरकार का ध्यान देश के गांवों की ओर गया है। इसके लिए भारत सरकार ने आदर्श ग्राम योजना प्रस्तुत की है। सर्वोदय विचार की बुनियाद ही इस देश के पांच लाख से अधिक गांव हैं। संत विनोबा ने ईश्वरीय आदेश से देशभर में पदयात्रा कर भूदान आंदोलन चलाया। इसका विकास ग्रामदान में हुआ। ग्रामस्वराज्य से शासनमुक्ति का विचार संत विनोबा ने दिया। साथ ही परिवार,समाज, देश और दुनिया की समस्याओं को हल करने के लिए ट्रस्टीशिप विचार का विकास मालकियत विसर्जन में किया। यहां पर हम संत विनोबा की 'ग्राम पंचायत' पुस्तक को सुधी पाठकों के लिए दे रहे हैं। –संपादक

ग्राम परिवार भावना

आज घरों में हमारी परिवार भावना होती है। वह नाकाफी है। यह विज्ञान का जमाना है। इसमें कोई भी परिवार अलग नहीं रह सकता। गांव-गांव मिलकर रहेगा, तभी ताकत बढ़ेगी। जैसे हमने घर-घर परिवार बनाये, वैसे ही इससे आगे ग्राम-परिवार बनायें। यह ग्राम-परिवार भारत की आवश्यकता है, आज के युग की मांग है। इसके बिना हम जी नहीं सकते। पहले यह बात हम भलीभांति समझ लें, फिर कमर कसें और कंधे से कंधा मिलाकर काम करें। फिर तो उत्पादन हम कई तरह से बढ़ा सकते है और गांव को भरा-पूरा बना सकते हैं।

परिवार में सस्ता महंगा का प्रश्न ही कहां

आज गांव में यह परिवार भावना कहीं दिखाई नहीं पड़ती। हमारे सभी गांव वाले बाहरी कपड़ा खरीदते हैं। गांव के बुनकरों द्वारा बुना कपड़ा नहीं पहनते। बेचारे बुनकर उसे लेकर बाहर बेचने जाते हैं और वहां न बिका तो सरकार के सामने रोते हैं। किंतु यदि किसान और बुनकर इकट्ठे होकर तय करें कि ''किसान जो सूत कातेंगे, उसे ही बुनकर बुनेंगे और बुनकर जो बुनेंगे, वही कपड़ा किसान पहनेंगे' तो दोनों जियेंगे। आज भी गांव में बुनकर और तेली हैं। लेकिन गांव का बुनकर अपने ही तेली का तेल यह कहकर नहीं खरीदता कि वह महंगा पड़ता है। वह शहर की मिल का ही तेल खरीदता है। इसी तरह गांव का तेली भी गांव के बुनकर का कपड़ा महंगा कहकर नहीं खरीदता और शहरों की मिलों का खरीदकर पहनता है। दोनों एक ही गांव में रहते हैं, पर तेली का धंध चल रहा है और न बुनकर का, क्योंकि दोनों एक-दूसरे की मदद नहीं करते। मान लीजिए, बुनकर ने तेली का तेल खरीदा, वह थोड़ा महंगा पड़ा और बुनकर ने की जेब से तेली के घर दो पैसे ज्यादा गये। फिर तेली ने बुनकर का कपड़ा खरीदा, वह थोड़ा महंगा था और तेली की जेब से बुनकर के घर दो पैसे ज्यादा गये, तो क्या फर्क पड़ा? इसके घर से उसके घर में गये और उसके घर से इसके घर में। मौके पर दोनों को मदद मिली, तो क्या नुकसान हुआ? मेरी इस जेब का पैसा उस जेब में गया और उस जेब से इस जेब में आया, तो मेरा क्या नुकसान हुआ? आखिर दोनों जेब मेरी ही हैं।

आपका गांव आपका घर

एक ही गांव में बुनकर, किसान, चमार, तेली सभी हैं। लेकिन तेली के तेल के लिए, बुनकर के कपड़े के लिए और चमार के जूते के लिए गांव में ग्राहक नहीं, यह क्या बात है ? गांव में इतने सारे लोग पड़े हैं, वे क्यों नहीं ग्राहक बनते ? कारण स्पष्ट है। ऐसा कोई सोचता ही नहीं कि 'यह मेरा गांव है'। अगर एक गांव रहकर भी 'यह मेरा घर है' इतना ही सोचेंगे, तो गांव का काम न बनेगा। गांव के किसी एक घर में चेचक हो, तो सारे गांव में उसकी छूत लग जाती है। क्या उसे रोक सकते हैं ? गांव में एक घर को आग लगे, तो पड़ोसी के घर को भी वह लगती है। क्या उसे रोक सकते हैं ?

ग्राम-परिवार भावना : युग की मांग

इसलिए कुल गांव को एक परिवार समझें, तभी काम बनेगा। अगर हम चाहते हैं कि यह जगह साफ रहे और यहां के दो घरवाले उसे साफ रखे, पर दूसरे दो घरवाले अपने लड़कों को पैखाने के लिए बैठाते हैं, तो क्या वह जगह साफ रहेगी? यह जगह तो तभी साफ रहेगी, जब चारों घरवाले मिलकर निश्चय करें कि हम उसे साफ रखेंगे। इसलिए गांव का काम, गांव की उन्नति और साथ-साथ घर की भी उन्नति तब होगी, जब गांव वाले सारे गांव को अपना एक परिवार मानेंगे।

यह 'मध्यम मार्ग'

आज के वैज्ञानिक जमाने में मनुष्य का जीवन जिस तरह बन रहा है, उस बारे में सोचते हुए हम गांव का परिवार नहीं बनाएंगे, तो हमें अपनी बहुत-सी समस्याएं हल करना कठिन हो जाएगा। गाम-परिवार बनाने की कल्पना का अनुराग इतना विस्तृत भी नहीं है कि वह अव्यक्त हो जाए। यह एक अत्यंत व्यावहारिक कार्यक्रम है। ग्राम-परिवार की कल्पना में जैसे नैतिक उत्थान है, वैसे ही व्यवहार की भी बड़ी सहूलियत है। बुद्ध भगवान् के शब्दों में ग्राम-परिवार की कल्पना को भी 'मध्यम मार्ग' कहा जाएगा।

इस तरह स्पष्ट है कि गांववालों को यदि सच्चे अर्थ में गांव की उन्नति की चाह है और वे गांव को सर्वांगीण बनाकर उसे राष्ट्र की सुदृढ़ नींव बनाना चाहते हैं, तो व्यापक रूप में ग्राम-परिवार की

भावना का कार्यान्वयन करना चाहिए। आज के युग की यही मांग है।

आदर्श गांव के सूत्र

वैसे आदर्श गांव का चित्र खींचना हो तो वहां का वातावरण और वहां बसने वाले लोगों के आचरण आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक सभी दृष्टियों से उन्नत होने चाहिए। फिर भी उसका स्वच्छ, संयत, शांत और स्वस्थ होना उसकी आदर्शता का पहला कदम है।

स्वच्छता और सफाई

मुख्य बात यह है कि गांव में स्वच्छता या सफाई होनी चाहिए। अगर गांव गंदे रहे, तो यही मानना चाहिए कि गांववाले नरक में रहते हैं। हम गांव-गांव जाते हैं, तो कई गांवों में नाक बंद करके ही प्रवेश करना पड़ता है, क्योंकि लोग गांव के बाहर खुले मैदान में ही पाखाना करते हैं। सारी बदबू हवा में फैलती है और बीमारी बढ़ती है। मनुष्य के मैले पर मक्खियां बैठती हैं और वही हम खाते हैं। उससे बीमारी फैलती है। इसी का नाम नरक है। यह नरक हमारा ही पैदा किया हुआ है। ऐसे नरक में जो लोग जीते हैं, उनको मरने के बाद भगवान स्वर्ग में कैसे भेजेगा? कई लोग रोज स्नान करते हैं, भस्म लगाते हैं, छुआछूत मानते हैं, दो-दो, चार-चार बार साबुन से हाथ-पांव धोते हैं। लेकिन जिस पर मक्खियां बैठती हैं, वह खाना जरूर खा लेते हैं। इसलिए हर व्यक्ति के घर के पीछे बगीचा हो। शौच के लिए लोग वहीं जायें और बाद में मैले पर मिट्टी डाल दें। गंदगी न फैलेगी और खाद भी तैयार होगी, जिसका उपयोग बगीचे में होगा। चीन, जापान में मनुष्य के मैले की खाद का बहुत अच्छा उपयोग होता है। इस तरह गांव में खूब स्वच्छता होनी चाहिए।

स्वच्छता में सरस्वती का वास

हम हिंदुस्तान के लोग स्नान किए बिना भोजन नहीं करते। चार लोटे पानी हो तो काफी है। लेकिन इतने में संतोष नहीं मानना चाहिए। ठीक तरह से स्नान जरूर करना चाहिए। अगर गांव में पानी न हो तो सबको मिलकर इंतजाम करना चाहिए। गांव में स्वच्छता रखेंगे, तो वहां धर्म रहेगा। जिस गांव में स्वच्छता होगी, वहां सरस्वती बसेगी। जहां गंदगी होती है वहां विद्या नहीं आती। सरस्वती का आसन कमल है। वह मैले पर कभी नहीं बैठेगी। इसी तरह अगर गांव में उद्योग नहीं चलते, सब चीजें बाहर से मंगवायी जाती हैं तो आप की लक्ष्मी आपके गांव में नहीं रहेगी। आपके गांव की जमीन चंद लोगों के हाथ में रहेगी और बाकी लोगों को पूरा खाना नहीं मिलेगा, तो गांव में शक्ति भी नहीं रहेगी। इसलिए गांव में सरस्वती, लक्ष्मी और शक्ति तीनों रखना चाहते हैं, तो गांव में स्वच्छता रखनी होगी।

संयम की आवश्यकता

इसी तरह हमें गांव में संयम का वातावरण लाना होगा। आज जनसंख्या तेजी से बढ़ रही है, यह ठीक नहीं। जनसंख्या बढ़ने का डर नहीं है। परंतु वह जिस ढंग से बढ़ रही है, वह ठीक नहीं। यदि इसी तरह विषय-वासना बढ़े, हम संयम का पालन न करें और भोग-विलास में ही डूबे रहें, तो निर्वीय तो हो ही जाएंगे। दुनिया के सामने विकट समस्या खड़ी हो जाएगी। फिर अहिंसा टिक न सकेगी। मानव मानव को कत्ल करने लगेगा। आज तो लड़ाई में बेखटके हत्या होती है। पर कल डॉक्टर कहे कि मनुष्य का ताजा गोश्त पुष्टिकारक होता है, तो लोग उसे भी खाना शुरू कर देंगे। आपने सुना होगा कि कई जानवर अपने बच्चों को खा जाते हैं। हम कहते हैं कि मनुष्य भोग-विलास न छोड़ेगा, तो यही हालत हो जाएगी। इसलिए आदर्श गांव को संयमी होना बहुत जरूरी है।

दैनिक प्रार्थना जरूरी

आदर्श गांव में रोजा प्रार्थना होनी चाहिए। इसके लिए गांव से बाहर स्वच्छ और खुली हवादार जगह हो। छोटा-सा कम्पाउण्ड भी हो सकता है, ताकि कुत्ते आदि जानवर उस स्थान पर जाकर गंदा न करें। वहां फूल वगैरह के पेड़ भी लगा सकते हैं। प्रार्थना के लिए जाते समय लोग बैठने के लिए अपना-अपना आसन ले जा सकते हैं। वहां भाई-बहन मिलकर संतों के भजन गायें और कोई प्रार्थना या मौन प्रार्थना रोज किया करें। जिसके जीवन में ज्ञान सुनने को नहीं मिलता, वह शुष्क जीवन है। रोज देह को खाना मिले, इतने से नहीं बनता। अंतरात्मा को भी ज्ञान का आहार, संस्कार देना आवश्यक है।

बगैर शांति के समृद्धि व्यर्थ

फिर गांव में शांति तो होनी ही चाहिए। शहरों में दिन-रात जो आवाज चलती है, उससे दिमाग बिगड़ता है। उसके कारण लोग पागल तक हो जाते हैं और आत्महत्या की प्रवृत्ति बढ़ती है, ऐसा वैज्ञानिकों का कहना है। अमेरिका में यह एक बड़ी समस्या है। वह तो समृद्ध देश कहलाता है, फिर भी वहां के देशवासियों के जीवन में शांति नहीं है। शांति के अभाव में बाकी सारी चीजें काम नहीं देतीं। इसलिए आदर्श गांव में शांति होना अत्यंत आवश्यक है।

ग्रामीण औषधों को प्राथमिकता

स्वस्थ ग्रामीण ही गांव की कुछ उन्नति कर सकते हैं। इसलिए आदर्श गांव के लिए स्वास्थ्य भी एक आवश्यक चीज है। अक्सर हम अपनी यात्रा के सिलसिले में गांववालों को गांव में अस्पताल की मांग करते पाते हैं। किंतु हम नहीं समझते कि एलोपैथी के अस्पताल गांव के लिए लाभदायक होंगे। वैसे किसी भी चिकित्सा के अच्छे औषधों को लेने से हम इंकार नहीं करते। फिर भी जहां तक हो, गांव के ही औषधों से उनका स्वास्थ्य सुधरे, यही चाहते हैं। मैंने पचासों बार जिक्र किया कि गांव-गांव में वनस्पतियों का बगीचा होना चाहिए। वहां सुलभ जड़ी-बूटियां पैदा करनी चाहिए, जिससे लोगों के बहुत-से रोग दुरुस्त किये जा सकें। हिंदुस्तान का औसत गांव पांच सौ जनसंख्या का होता है। हमने हिसाब लगाया कि ऐसे गांव के लिए एक एकड़ का वनस्पति का बगीचा पर्याप्त है। बात इतनी ही है कि इस काम के जान मनुष्य होना चाहिए।

- क्रमशः

यह धर्मांतरण नहीं समाजांतरण है

— दादा धर्माधिकारी

हमारे प्राचीन साहित्य में एक संकेत है कि भारतवर्ष में जन्म मिलना दुर्लभ है। कई जगह यह भी कहा गया है कि भारत कर्मभूमि है और इसलिए पुण्यभूमि है। मैं सोचता रहा कि इस देश को यह अभिधान क्यों दिए गए होंगे। विश्वात्मा के वैतालिक रवि ठाकुर ने इसे मानवता का महासागर कहा और साथ-साथ यह भी कहा कि पता नहीं कि किसके आह्वान से कहां-कहां से मानवता की धाराएं आईं और समुद्र में खो गईं। तब कुछ प्रकाश चित्त में पड़ा। सारांश यह है कि पृथ्वी पर जितने मानवता के भेद हैं, उन सबको एक ही क्षेत्र में देखना हो तो वह मानवता तीर्थराज भारतवर्ष है। इसलिए इसे पुण्यक्षेत्र माना गया। इतनी विविधताएं - वर्ण की, रूप की, वेशभूषा की, रहन-सहन की, तौर-तरीकों की, पृथ्वी के और किसी क्षेत्र में नहीं हैं, किसी महाद्वीप में भी नहीं हैं। इसलिए इसे भरतखण्ड भी कहा गया। यह मानवता की भिन्न-भिन्न धाराओं का संगमतीर्थ है।

विविधता बनाम विषमता

सवाल यह होता है कि यदि इस देश की नियति मानवता की भिन्न-भिन्न जातियों, वंशों और वर्गो के सहजीवन की है तो यहां की ये विविधताएं, विषमता और विरोध में क्यों परिणत हुईं? मानवता के इन भिन्न-भिन्न प्रकारों का सहजीवन सिद्ध क्यों नहीं हो सका? असल में तो भारतीयता हिंदू समाज की ही अस्मिता है। हिंदुओं का दर्शन, उनका प्राचीन साहित्य, उनका इतिहास और परंपरा ही भारतीय विशेषण से गौरवान्वित की जाती है। इस सारी उज्ज्वल परंपरा का श्रेय हिंदू समाज को ही मिला है। इस परंपरा के विषय में भगिनी निवेदिता ने कहा था कि भारतीय दर्शन की विशेषता संवादित्व, सामंजस्य और संगतिकरण में है। परंतु प्रत्यक्ष जीवन तो निवेदिता के कथन के बिलकुल विपरीत है। आज इस देश की विविधता में संवादित्व तो दूर रहा, समन्वय की दृष्टि भी नहीं है। इस विविधता में से सहजीवन तो निष्पन्न हुआ ही नहीं, शांतिपूर्ण सहअस्तित्व भी निष्पन्न नहीं हुआ। कलह-विग्रह और संघर्ष निष्पन्न हुआ।

मैं इसकी खोज में रहा कि इसका मूल कारण क्या रहा होगा ? सबसे अधिक इसके लिए कौन जिम्मेदार है? सारी चराचरण सृष्टि की एकरूपता और भूतमात्र की एकात्मता की गौरव गाथाएं जिन्होंने जिन्होंने गायीं उनके देश में छितराव और बिखराव ही वास्तविकता हो - यह कैसा दैव-दुर्विलास है! अपने अध्ययन और चिंतन के फलस्वरूप मैं इस नतीजे पर पहुंच रहा हूं कि इस देश की प्राचीन परंपरा पर गर्व करने वाला और उस पैतृक सम्पत्ति पर अपना निर्वाह करने वाला हिंदू समाज ही इसके लिए अधिक जिम्मेदार है। भारत की दिव्य परंपरा का अगर श्रेय उसका है, तो उसकी अवनति का दोष भी उसी का है।

अधोगति का कारण

हिंन्दू समाज - अगर उसे समाज कहा जाए तो छोटी-छोटी हवा-बंद इकाइयों का एक बिखराव है। ये जो हवा-बंद इकाइयां हैं, ये अहं-पावित्र्यवादी हैं। इनका मुख्य लक्षण यह है कि ये दूसरों को अपने भीतर प्रवेश करने योग्य नहीं मानतीं प्रवेश के दरवाजे इन इकाइयों में हैं ही नहीं। इनमें से बाहर तो जाया जा सकता है, बल्कि बहिष्कृत भी किया जा सकता है, लेकिन इसके भीतर जाने का रास्ता ही नहीं है। मतलब यह कि हिंदू समाज के सारे घटक अयोग्य व्यावर्तक हैं अर्थात इनमें आपस में भी प्रवेश के दरवाजे नहीं हैं। तो इस अलगाव का जनक असल में हिंदुओं का सामाजिक चारित्र्य ही है। तुम हमारे पड़ोस में रहो, लेकिन अपनी चहारदीवारी में रहो। तुम्हारे और हमारे बीच की दीवार पक्की, अभेद्य और अनुल्लंघनीय हो। परिणामस्वरूप हर गांव और हर शहर में मोहल्लों के नाम पर छोटे-छोटे जातिस्तान बन गए। हर एक एक-दूसरे के अगल-बगल रहे, लेकिन साथ रहने में पतन माना। मनुष्य के संपर्क को ही संसर्ग माना, छूत माना। यह स्पर्श भावना ही हमरी अधोगति का मुख्य कारण रहा है।

जाति की सहेली बनकर भाषा आयी। यों भाषा की भूमिका व्यावर्तक नहीं है। भाषा है ही दूसरे के लिए। अकेले मनुष्य के लिए भाषा किस काम की? असल में भाषा की भूमिका दूसरों के साथ संपर्क और परिचय की है, इसीलिए मनुष्य की विशेषता भाषांतर और अनुवाद की प्रवीणता है। भाषाएं जितनी नजदीक आएंगी, उतनी उनकी भूमिका विशद और व्यापक होगी। लेकिन आज तो हम पर भाषावाद का खब्त सवार है। भाषिस्तानों का बोलबाला है।

मतलब यह कि जातिस्तान की कोख से पाकिस्तान का जन्म हुआ और भाषिस्तान की कोख से बहुराष्ट्रवाद का जन्म हो रहा है। सम्प्रदायवाद और द्विराष्ट्रवाद जातिवाद की संतान है। बहुराष्ट्रवाद का जनक संकीर्ण भाषावाद है। अब इन दोनों के गर्भ से अनंत उपराष्ट्र है जो इस भारत भूमि की ठीकरे-ठीकरें करने पर उद्यत है। ये सारी संतानें अपने जनक के मूल नक्षत्र पर पैदा हुई हैं। इस देश की अखण्डता के नारे लगाने वाला हिंदू ही इसके प्रतिकार के लिए कुछ भी करने में असमर्थ है, क्योंकि उसके सार्वजनिक जीवन की वास्तविकता जातिभेद है। और जातियां अलगाव की वृत्ति से बनी हैं जो स्वभावत: व्यवच्छेदक हैं।

धर्मांतरण या समाजांतरण

एक तरफ तथाकथित बहुसंख्यक जातिबद्ध हिंदू समाज है और दूसरी तरफ सम्प्रदायवादी अन्य कुछ अल्पसंख्यक माने जाने वाले

समाज हैं। असल में हिंदू समाज की बहुसंख्यक एक भ्रम है, एक ऐसा गुब्बारा है, जिसे सुई की नोक का स्पर्श भी समाप्त कर सकता है। और यही हुआ है। यहूदी, मुसलमान, ईसाई, सिख ये सारे सम्प्रदाय हैं। यों तो बौद्ध और जैन भी सम्प्रदाय ही हैं, लेकिन जैन सम्प्रदाय जाति में परिणत हो गया है और सारे बौद्ध सम्प्रदाय का पुनर्जन्म अम्बेडकर सम्प्रदाय के रूप में हो रहा है। उसे द्विजत्व प्राप्त हो गया है और साथ-साथ उसका रूपांतर भी हो रहा है। सम्प्रदाय का प्रधान लक्षण यह है कि उसमें बाहर वालों का स्वागत ही नहीं, वरन् उनको दावत है। हिंदू समाज जिन मनुष्यों को घूरे पर फेंक देता है, उनका वे निमंत्रण करते हैं। इसमें हिंदुओं के लिए शिकायत का कौन-सा मौका है ? जिनका हमने तिरस्कार किया, उनका उन्होंने सत्कार किया। वे मिलाते हैं और हम नफरत करते हैं,और उल्टे मिलाने वालों को कोसते हैं। इसमें कौन-सा शील या संस्कृति है ? उनका तो यह शील ही है कि सबका निमंत्रण और स्वागत करो। बहिष्कार ही जिसका शील है, वह हिंदू अपनी संस्कृति पर गर्व करता है और स्वागत जिसका शील है, उसको कोसता है। आज जिसे हम धर्मांतरण कहते हैं वह धर्मांतरण नहीं समाजांतर है। बौद्ध बनने पर अछूत अछूत ही रह गए। अब उनके लिए कौन-सा चारा है ? हिंदू रहकर तो वे जाति का त्याग कर नहीं सकते। एक ही उपाय है हिंदू समाज को छोड़ दें। मैं उनकी जगह होता तो यही करता। उनमें से कुछ हिंदू समाज में लौट भी रहे हैं, लेकिन उनका क्या स्थान होगा ?

दोष किसका ?

हमारे देश में वर्ग समस्या से जाति समस्या का स्वरूप बहुत बड़ी हद तक भिन्न है। मुसलमानों में कम से कम एक उसूस के तौर पर पूरी-पूरी बराबरी है। सारे मुसलमानों की अस्मिता एक है। उस अस्मिता के टुकड़े नहीं हुए हैं। मुसलमान मालिक और उसके गुलाम का दस्तरखानएक ही होता है। कई दफे तो उनकी शादियां भी हुई हैं। जो उप संप्रदाय उनमें हैं वे भी हमारी जातियों की तरह सख्त और चुस्त नहीं है। आपने नाम पूछा, उसने जवाब दिया गुलाम मोहम्मद। उत्तर पूरा है। उसने आपसे पूछा, आपने जवाब दिया - गोपाल स्वरूप। आकांक्षा शेष रह गयी। गोपाल स्वरूप कौन? ब्राह्मण है, कायस्थ है या भंगी? मुसलमान मुसलमान है, ईसाई ईसाई है, सिख सिख है, लेकिन हिंदू क्या है ? उसकी अस्मिता बिखर गयी है। दोष उसका है इन सम्प्रदायों का नहीं। अपने अपराध का दोष दूसरों के सिर मढ़ना यह गैरजिम्मेदारी है। जब तक हिंदू अपना घर संभालने के बजाय दूसरों को कोसता रहेगा, तब तक हिंदू समाज में से निर्यात बराकर होता रहेगा। भगवान बोल चुका है उपाय एक ही है कि वह ईमानदारी से जाति संस्था को तिलांजलि दें। इसके सिवाय कोई दूसरा चारा नहीं है। जाति का स्थान जन्म है और जन्म विवाह से होता है। अंतर्जातीय विवाह नहीं जातियां पैदा करता है, इसी से चार की चार हजार जातियां हो गयीं। हमारे यहां इसे संकर कहा गया। और अर्जुन कहता है कि संकर से व्यक्ति नरक में जाता है। इसलिए जाति तब नष्ट होगी जब सजातीय विवाहों पर प्रतिबंध होगा। जैसे कुछ साल पहले सगोत्र विवाहों पर था। यह प्रक्रिया धीरे-धीरे नहीं हो सकती। समाज में कुछ प्रक्रियाएं धीरे-धीरे हो सकती हैं, लेकिन जिसकी मनुष्यता खो गयी है और जिसे इस धरती पर रहने के लिए चप्पाभर जमीन भी नसीब नहीं होती है, जो ईश्वर की विरासत से ही वंचित है, उसे धीरज का पाठ पढ़ाना निष्ठुरता और हृदयहीनता है। वह कैसे धीरज रखे? हमारे संविधान के शिल्पकार अम्बेडकर जी ने मुझसे यही कहा था - मेरे आत्मीय गांव में रह नहीं सकते। वे कुंओं पर पानी नहीं भर सकते, स्कूलों में दूसरों के बराबर बैठ नहीं सकते, मंदिरों में दर्शन नहीं कर सकते। जिनकी मानवता केवल सफेद कागज और काली स्याही तक सीमित है, उनको आप सब्र का सबक सिखा रहे हैं। अब तो समय और भी कम है। हिंदू समाज से निर्यात नहीं रुकेगा।

वास्तविक दर्शन

हिन्दू समाज की कमजोरी इस निर्यात में ही है। शरीरबल या शस्त्रबल के अभाव में नहीं है। आज भी वास्तविक बहुसंख्या मुसलमानों की है। इस वास्तविकता को पहचानने से हम डरते हैं। वास्तविकता को पहचानें। बुढ़िया मुर्गे को टोकरी के नीचे दबा दे तो मुर्गा भले बांग न दे, लेकिन सूरज तो निकलने से नहीं रुकेगा। हिन्दू आज उस बुढ़िया जैसा ही, मुर्गे को ढंकना चाहता है। हिन्दू समाज से होने वाले निर्यात पर ही इस देश में सारे सम्प्रदाय पनपे हैं। इस सामाजिक तथ्य को हम पहचानें अन्यथा राष्ट्रीय एकात्मता एक दिवास्वप्न रहेगा। घड़ी की सुइयां तेजी से आगे सरक रही हैं। अब सब्र का फल मीठा नहीं, कड़ुआ जरूर होगा। मुसलमानों और ईसाइयों को कोसना फिजूल ही नहीं, खतरनाक भी है।

संगठित धर्म बनाम वास्तविक धर्म

धर्मांतर और समाजांतर में मूलगामी भेद है। सर्व धर्म और समभाव या सर्व धर्म समानत्व में धर्मांतर के लिए अवकाश ही कहां है? श्रीरामकृष्ण परमहंस देव ने सारे धर्मो का अनुष्ठान अपनी व्यक्गि साधना में किया। गांधीजी ने सर्व धर्म प्रार्थना में उसे सामुदायिक उपासना का रूप दिया। विनोबा ने सारे धर्मों और पंथों के प्रमाणभूत ग्रंथों का अध्ययन और पारायण समान निष्ठा से किया। यह धर्मो का अनुष्ठान है। इसमें सांस्कृतिक संवाद है। लेकिन आज संगठित धर्म समाजों के रूप में प्रस्थापित हो गया है। ये धार्मिक समाज सम्प्रदायवादी होते हैं। हिन्दू जातिवादी है। अन्य समाज सम्प्रदायवादी हैं। इसमें न ईश्वर है, न अध्यात्म है और न नैतिकता है। मक्कार ब्राह्मण भी ब्राह्मण ही है, ईमानदार भंगी भंगी ही है। फरेबी मुसलमान मुसलमान है और झूठा ईसाई ईसाई है। साम्प्रदायिक समाज का मानवीय मूल्यों के साथ कोई संबंध नहीं है। जातिवाद और सम्प्रदायवाद को मानवीय मूल्यों की तरफ से रतौंधी हो गयी है। इसलिए हमको संगठित धर्म और वास्तविक धर्म का भी अंतर भलीभांति समझ लेना चाहिए। अब संगठित धर्म का भी अंत होना

चाहिए। आइंदा अब कोई बच्चा न हिन्दू पैदा होगा न मुसलमान। समाज के रूप में संगठित संप्रदाय अब नहीं रहेंगे। क्रांतदर्शी विनोबा कह चुका है कि आनेवाला जमाना विज्ञान और अध्यात्म का है, धर्म और राजनीति के दिन लद गए।

धर्म की कोई विशिष्ट भाषा नहीं

अब मैं उन मुसलमान, ईसाई और सिख मित्रों से कुछ विनोद करना चाहता हूं जो संकीर्ण सांप्रदायिकता से ऊपर उठकर मानवता की भूमिका पर आरूढ़ होना चाहते हैं। एक बात तो स्पष्ट ही है कि किसी संप्रदाय या धर्म की कोई विशिष्ट भाषा नहीं हो सकती है, चाहे उसके धर्मग्रंथ किसी भी भाषा में लिखे गए हों। वह तो एक ऐतिहासिक संयोग है। मुसलमानों का धर्मग्रंथ अरबी में लिखा गया है, लेकिन क्या अरबी दुनियाभर के मुसलमानों की भाषा है और क्या उर्दू बंगलादेश के मुसलमानों की भाषा है ? क्या अरबी लिपि उनकी लिपि है ? सारा यूरोप और अधिकांश अफ्रीका ईसाई है। क्या उनकी भाषा और लिपि एक है। कल मैं ईसाई हो जाऊं तो मैं बाइबिल की भाषा सीखूंगा या बाइबिल मेरी भाषा में आएगी ? क्या यह जरूरी है कि मैं अपनी पोषाक बदलूं, खानपान बदलूं, ईसा को पूजने के लिए ? फिर क्यों यह जरूरी होना चाहिए कि महाराष्ट्र, तमिलनाड और गुजरात में उर्दू स्कूल हों ? यह संप्रदायवाद है। इसमें धर्म की बू तक नहीं है।

यहां मैंने इस देश के राष्ट्र परायण व्यक्तियों का ध्यान कुछ ज्वलंत समस्याओं की तरफ दिलाने की कोशिश की है। देशभक्ति अलग चीज है और राष्ट्रीयता अलग। देशभक्ति है जमीन से मुहब्बत, और राष्ट्रीयता है उस जमीन पर रहने वालों के साथ रहने की आकांक्षा। वह दिन भारत के भाग्योदय का दिन होगा जिस दिन कश्मीर का इनसान केरल के साथ और अरुणाचल का इनसान कच्छ के इनसान के साथ रहना चाहेगा। उस दिन के आगमन के लिए हम निरंतर प्रयत्नशील रहें और मंगलकलश लेकर उसका स्वागत करें।

–मध्यप्रदेश सर्वोदय संघ के 17वें प्रादेशिक सर्वोदय सम्मेलन में प्रकाशित स्मारिका 1984 से साभार

स्वास्थ्य समाचार

सर्वोदय सेवक और गोविभा के संपादक श्री नरेंद्र भाई स्वस्थ एवं प्रसन्न हैं। विजयादशमी पर्व पर वे कुछ समय के लिए भोपाल गए। कुछ समय बिताने के बाद वे पुन: इन्दौर आ गए हैं। बैंगलोर में विश्वनीडम में अपनी सेवाएं देने के बाद उनके सुपुत्र श्री पावस भी इन्दौर आ गए हैं। वे अपने पिता की दिन–रात सेवा कर रहे हैं। जब श्री नरेंद्र भाई को श्री पंथराम भाई का पत्र पढ़कर सुनाया तब वे काफी प्रसन्न हुए। खासकर इस बात पर तो वे देर तक हंसते रहे, जिसमें उन्होंने अपने हाथ से खादी का कफन बनाकर रखने का उल्लेख किया है। उन्होंने अपने पत्र में श्री नरेंद भाई के सन् 1984 में रायपुर आने का उल्लेख किया है। उन्होंने इस बात की तस्दीक की। स्मरण शक्ति उनकी तेजस्वी बनी हुई है। सभी को दीप पर्व की हार्दिक शुभकामनाएं।

जिजिविषेत् शतं समा:

विगत माह श्री पंथराम वर्मा जी का पत्र प्राप्त हुआ। वे संयुक्त मध्यप्रदेश के मध्यप्रदेश भूदान बोर्ड के अध्यक्ष थे। 14 अक्टूबर, 1924 को जन्मे श्री पंथराम वर्मा ने इस माह 90 वर्ष में प्रवेश किया। उन्हें जन्मदिन की हार्दिक शुभकामनाएं। उनके द्वारा भेजे गए पत्र के संपादित अंश यहां प्रस्तुत हैं।

आदरणीय श्रीमान भाई नरेंद्र,

सादर प्रणाम, जयजगत...!

आपके द्वारा प्रकाशित पत्रिका गोविभा के माध्यम से आपसे मुलाकात हुई, श्री लोकनाथा भाई ने पत्रिका दी थी। आपकी पत्नी के निधन का समाचार 'मैत्री' पत्रिका के माध्यम से मिला था, आपकी बीमारी का भी समाचार मिला, अत्यंत दु:ख की बात होती है, अर्धांगिनी का निधन, मैं भी भुक्तभोगी हूं, 3 वर्ष पहले मेरी पत्नी का निधन हुआ था, पत्नी के निधन से पति अर्धांग हो जाता है। आप शायद बोल नहीं सकते, 'मानस' में तुलसीदास लिखते हैं ईश्वर मूक को वाचाल तथा पंगु को पहाड़ के शिखर पर चढ़ने वाला बना देता है, यहां वाचार को मूक बना दिया, इसका खेद होता है।...मेरी भी उम्र 14 अक्टूबर को 90 साल पूर्ण हो जाएगी। चरखा चलाकर 7 मीटर खादी बुनवाई थी,कुरता बनाने के बाद शेष कपड़ा कफन के लिए सुरक्षित रखवा दिया है। 5 लड़के 2 लड़कियों को बता दिया है कि मृत्यु के बाद इसी कपड़े को कफन के रूप में उपयोग करेंगे। कपड़ा बने दो साल हो गए हैं, फिर भी मृत्यु नहीं आ रही है।...भगवान अगर जन्म के अनुसार मृत्यु देता तो उसका क्या बिगड़ जाता ? ये तो हुई घर की बातें कुछ जग की भी हो जाए, इस वर्ष के आम चुनाव में कांग्रेस पार्टी की हार ऐतिहासिक है, वातावरण कुछ ऐसा लगा कि धर्मनिरपेक्षता के विरुद्ध धर्म सापेक्षता (हिंदू राष्ट्र की कल्पना) को लोगों ने माना, लेकिन भाजपा सत्ता में आई जरूर पर राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ इस पर हावी है, मोहन भागवत जैसा कहेंगे सरकार करेगी, शायद गौहत्या भी बंद हो सकती है राज्यों के अधिकार समाप्त कर केंद्रीय कानून बन सकता है। लेकिन हिन्दू राष्ट्र की कल्पना की झलक शुरू हो गई है। हिन्दुस्तान में सब हिंदू का नारा तथा शंकराचार्य और सांई भक्तों का विवाद नई सरकार आने पर ही क्यों शुरू हुआ जबकि शंकराचार्य और सांई बाबा पुराने हैं। संभवत: इसी की प्रतिक्रिया में जवाहिरी (अलकायदा) कह रहा है कि भारत को मुस्लिम राष्ट्र बनाना है। ऐसे शब्दों का उच्चारण सांप्रदायिकता को बढ़ावा देगा। इसके मूल में कट्टर हिंदूवादी तथा कट्टर मुसलमान हैं। आम आदमी यह नहीं चाहता।

अपने सर्वोदय समाज में जो विखंडन चाने सर्व सेवा संघ का विभाजन पवनार आश्रम में आपके हमारे बीच हुआ था, श्री जे.पी. को रणछोड़ बनने के लिए बाबा ने मौन तोड़कर कहा और वे नहीं माने, रेफरशिप करने वाले को टीम में शामिल नहीं होना चाहिए, 'संपूर्ण

क्रांति' बाबा के शब्दों में 'संपूर्ण भ्रांति' की संज्ञा दिया जाना सत्य साबित हुआ। आज भी सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष पर महादेव विद्रोही काबिज है। वे आपातकाल में जेल में रहे। संभवत: धीरे-धीरे वही लोग हावी हो जाएंगे। 'खादी ग्रामोद्योग आयोग' को भी केंद्रीय शासन ने भंग कर दिया है।

गांधी-विनोबा की बातों को स्वराज्य के बाद अनदेखा किया गया, गांधीजी को काफी दर्द था, अपने जन्मदिन 2 अक्टूबर 1947 को उन्होंने कहा था कि 'मैं वही गांधी हूं जिनकी एक आवाज पर लाखों लोग मरने को तैयार हो जाते थे, आज कहता हूं कि 'ऐसा करो' तब वे कहते हैं नहीं करेंगे, अब जीने की तमन्ना नहीं है, भगवान जल्दी उठा ले आदि।

'हिंद स्वराज्य' पुस्तक जो गांधीजी ने 1909 में ब्रिटेन से दक्षिण अफ्रीका आते समय लिखी और उसका समर्थन अंत तक किया, उसमें आज के प्रजातांत्रिक प्रणाली पर कुठाराघात किया था, आप परिचित हैं, उनका यह कहना कि ब्रिटेन की पार्लियामेंट, जिसे सब देशों की पार्लियामेंटों की माता कहा जाता है, वह 'बांझ और वैश्या' है।

सर्वोदय समाज, सबका उदय, सर्वजन हिताय सर्वजन सुखाय' चाहता है यह सर्वोदय का बीजमंत्र है, सारी दुनिया 'बहुजन हिताय बहुजन सुखाय' पर केंद्रित है और यह बहुजन 51 बनाम 49 पर आ गया है यही सारे झगड़ों की जड़ है मधुकौडा जैसा निर्दलीय व्यक्ति मुख्यमंत्री बन जाता है भले अभी जेल में हो वह अलग बात है।

'पहले एक जन हिताय बहुजन दुखाय' राजतंत्र के नाम से था उसे समाप्त कर उसकी प्रतिक्रिया स्वरूप बहुजन हिताय अल्पजन दुखाय' आया जो सारी दुनिया में चल रहा है। इसमें दोष है अब सर्वसम्मति से गांवों में पंचायतें बने राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता समाप्त हो, बहुजन हिताय से सर्वजन हिताय में देश कैसे जा सकता है इस विषय पर चर्चा होनी चाहिए। सर्वोदय विचार को कोई काट नहीं सकता अकाट्य बीजमंत्र है जब पानी पड़ेगा तब बीज का अंकुरण होगा धीरे-धीरे वह वृक्ष सारे भारत को आच्छादित करेगा ऐसी आशा करें तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। संत महात्माओं की बात नहीं मानी कांग्रेस को समाप्त कर लोक सेवक बनाने की बात नहीं मानी गई, सेवाग्राम में गांधीजी की मृत्यु बाद हुए सम्मेलन मार्च 1948 में अपने पिताजी के साथ मैं भी गया था उम्र 24 साल थी। उसमें पं.जवाहरलाल नेहरू, सरदार पटेल, राजेंद्र बाबू, विनोबाजी आदि महान लोग थे। सर्वोदय समाज स्थापित करने का संकल्प हुआ था, कांग्रेस को भंग करने की मेरी हिम्मत नहीं है, गांधीजी रहते तो हो सकता था, पं.नेहरू जी ने वहां कहा था, ऐसा मेरा ख्याल है।

अंत में 'साधु अवग्या कर फल ऐसा। जरे नगर अनाथ कर जैसा।। भारत नक्सलवाद, आतंकवाद, सांप्रदायिकता, डकैती, लूटपाट, भ्रष्टाचार आदि की आग में जल रहा है, हम मूक दर्शक बने हैं। भगवान सबको सद्बुद्धि दे। भूदान की जमीन जो बंट गई है, उसे आदाता बिक्री कर रहे हैं जिला सर्वोदय मंडल का प्रतिनिधिमंडल श्रीमान मुख्यमंत्रीसे मिलने जून में इस वर्ष गया था, हमने मांग की थी कि बिक्री रोकी जाए, भोपाल से भूदान के रजिस्टर जो सेक्रेटरिएट (राजस्व विभाग) में जमा हैं, छत्तीसगढ़ के जिलों से संबंधित को रायपुर मंगाया जाए, यहां भी भूदान बोर्ड का गठन हो। मुख्यमंत्री श्रीमान रमनसिंह ने मान्य किया है। भोपाल में रिकार्ड मिलना चाहिए। सालभर पूर्व दिल्ली गया था तो इस विषय की चर्चा श्रीमान मोतीलाल वोरा से की, तो उन्होंने मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री शिवराज चौहान को पत्र लिखा था। मेरे पास पत्र की कॉपी है। स्मरणीय है कि जब सुंदरलाल पटवा मुख्यमंत्री 1990 में बने तो भूदानयज्ञ बोर्ड को भंग करके सारे रिकार्ड राजस्व विभाग में जमा करवा लिए थे, हमारे सचिव रमेश शर्मा ने जमा किया था। 19-20 वर्ष बाद क्या वहां रिकार्ड्स सुरक्षित होंगे या नहीं, इसकी भी जानकारी नहीं है। छत्तीसगढ़ के राजस्व सचिवने सालभर पूर्व मध्यप्रदेश के राजस्व सचिव को पत्र भेजकर रिकार्ड भेजने का लिखा था, पर वहां से कोई जवाब नहीं आय। अब मध्यप्रदेश के भूदान भूमि का क्या हाल है ? यहां जैसे वहां भी बिक्री हो रही होगी। वहां भी पुन: भूदान बोर्ड गठन की बात शासन के ध्यान में लाई गई है क्या ?

भूदानधारक हक पर जमीन बंटी थी उसे तहसीलदार से मिलकर भूस्वामी हक बना रहे हैं, कलेक्टर दुर्ग से शिकायत करने गया था तो 10 वर्ष बाद भूस्वामी हो सकते हैं, ऐसा कहा गया। ग्रामदानी एक दो गांव में कुछ गतिविधियां प्रारंभ हैं या नहीं ? अनेक विषयों पर आपका ध्यानाकर्षण किया है।

पत्र लंबा-चौड़ा हो गया है पर कलम रुक नहीं रही थी। अब समाप्तम - पत्रोत्तर जरूर देंगे। अब तो मृत्यु का समय नजदीक है, फिर भी मोह होता है 4 लाख एकड़ भूमि का।

– पंथराम वर्मा

प्रकाशक :
नरेन्द्र दुबे, कार्याध्यक्ष, गोविज्ञान भारती
द्वारा मुंबई सर्वोदय मण्डल, 299, ताड़देव रोड, नानाचौक
मुंबई-400 007, फोन : (022) 23872061

डी-37, सुदामा नगर, इन्दौर-452 009
फोन : 0731-2489475, मो. : 97542 20781
www.govigyan.org ● e-mail : vinobaji1@gmail.com
prof.pushpendra@gmail.com

मुद्रण : श्रीकृति ग्राफिक्स, बी-133, सुदामानगर, इन्दौर
मो. : 98269 51703

आजीवन शुल्क : 1,000 ● वार्षिक शुल्क : ₹ 50 ● एक प्रति : ₹ 5

गोविभा

रजि. MPHIN/2003/11246
पोस्टल रजि.आई.सी.डी. (एम.पी.) 1106/12-14

सेवा में,